ईश्वर नहीं, भ्रष्टाचार विरोध का चमत्कार

– नागरिक

श्रीमान अरविंद केजरीवाल ने दिल्ली के मुख्यमंत्री पद की शपथ लेने के बाद अपने भाषण में तीन बार भगवान, अल्लाह, परमपिता परमेश्वर और वाहे गुरू को धन्यवाद दिया तथा कहा कि दिल्ली में आम आदमी पार्टी की जीत इन्हीं का चमत्कार है। इसके पहले तक वे आम आदमी पार्टी की जीत को आम आदमी की जीत घोषित करते रहे थे। वे कहा करते थे कि कांग्रेस और भाजपा को आम आदमी पार्टी ने नहीं बल्कि आम आदमी ने पराजित किया है।

आम आदमी के बदले अब अपनी पार्टी की जीत को भगवान को समर्पित करना उसी अवसरवाद का हिस्सा है जिसमें यह मंडली माहिर है। ये पलक झपकते ही अपनी बातें बदल देते हैं।

टाइम्स ऑफ इंडिया की एक रिपोर्ट के अनुसार अरविंद केजरीवाल कुछ साल पहले तक स्वघोषित नास्तिक थे। यानी उन्हें किसी भगवान, अल्लाह, परमपिता परमेश्वर वाहेगुरू पर भरोसा नहीं था। वे इनके अस्तित्व से इंकार करते थे। टाइम्स ऑफ इंडिया बेहतर जानता होगा क्योंकि वह अपने अखवार में अध्यात्म पर एक नियमित कालम चलाता है।

अब इन महाशय को ईश्वर पर भरोसा हो गया है कि वे 20 मिनट के अपने भाषण में इसका तीन बार जिक्र करते हैं और वह भी चारों धर्मों के भगवानों का। वे बौद्धों और जैनियों के ईश्वर का जिक्र नहीं कर सकते थे क्योंकि ये धर्म औपचारिक तौर पर नास्तिक हैं। ये किसी ईश्वर के अस्तित्व से इंकार करते हैं।

कोई कह सकता है कि जितनी तेजी से ये पूंजीवादी राजनीति में सफल हुए हैं वह इन्हें ईश्वर पर विश्वास करने की ओर ले ही जायेगा। यह चमत्कार से कम नहीं है कि वे इतने थोड़े समय में दिल्ली प्रदेश की सरकार पर काबिज़ हो गये। इतना बड़ा चमत्कार तो ईश्वर ही कर सकता है। ऐसे में नास्तिक ईश्वर आस्तिक हो जाय तो आश्चर्य नहीं। चमत्कार को नमस्कार!

लेकिन तब भी नास्तिक से आस्तिक में रूपांतरण में निहित अवसरवाद इतना मुखर है कि उसे दांये-बांये नहीं किया जा सकता। किसी भी ईश्वरवादी या आस्तिक को अधिकार है कि अपनी उपलब्धियों को ईश्वर की देन माने और उसके लिए ईश्वर को धन्यवाद दे। लेकिन उसके लिए चारों धर्मों के ईश्वर को पुकारने की क्या जरूरत है। वास्तव में यह एक ईमानदार आस्तिक के दिल से निकली हुई बात नहीं है बल्कि यह एक घुटे हुए अवसरवादी राजनीतिज्ञ की बात है जो चारों धर्मों के लोगों के वोट पर

केजरीवाल : संघर्ष जारी रहेगा

निगाह रखे हुए हैं। यह धर्म निरपेक्षता का मामला भी नहीं है क्योंकि धर्मनिरपेक्षता सभी धर्मों और उनके ईश्वर का नाम लेने में निहित नहीं है बल्कि राजकाज के संचालन को धर्मों से अलग करने में है। यदि भारत एक धर्मनिरपेक्ष जनतंत्र है तो सरकार बनने-बिगड़ने के मामले में ईश्वर को नहीं घसीटा जाना चाहिए। जनतंत्र में सरकार बनाना या बिगाड़ना नश्वर मनुष्यों का काम है, किसी ईश्वर का नहीं। ईश्वर को इसमें घसीटना धूर्त राजनीतिज्ञ का काम है।

दिल्ली प्रदेश के चुनावों में केजरीवाल की मंडली की जीत चमत्कार तो है पर इस चमत्कार को जनता ने अंजाम दिया और न कि ईश्वर ने।

दिल्ली की जनता में केजरीवाल एण्ड कम्पनी को एक ईमानदार और जनता के लिये कुछ करने में प्रयासरत पार्टी के रूप में स्थापित करने का काम आम आदमी ने किया है। यह इसने अपने प्रचार माध्यमों के जरिये किया है। यह पिछले तीन सालों से किया जा रहा है। यह इतनी पक्षधरता से किया जा रहा है कि कई बार यह कहना मुश्किल हो जाता है क्या दोनों अलग-अलग हैं।

इन चुनावों से पहले भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन के दौरान इन प्रचार माध्यमों ने इन्हें भ्रष्ट राजनीतिज्ञों के खिलाफ़ जिहादी के रूप में स्थापित किया। 2011 के रामलीला मैदान को तो इन प्रचार माध्यमों ने ही संचालित किया था।

इसके बाद जब यह मंडली चुनाव में उतरी तो इनके जनता से किये लोकलुभावन वायदों को भी इन्होंने सकारात्मक रूप में प्रस्तुत कर स्थापित किया। बात कुछ इस रूप में प्रस्तुत की गयी कि क्या इतने अच्छे वायदों को ये पूरा कर पायेंगे?

गौरतलब है कि निजीकरण-उदारीकरण के पूरे दौर में पूंजीपति वर्ग इस तरह के किसी भी वायदे के खिलाफ़ रहा है। वह जनता को दी जाने वाली किसी भी राहत को लोकलुभावनवाद घोषित कर उसके खिलाफ़ अभियान चलाता रहा है। वह बताता रहा है कि इसी वजह से अतीत में भारतीय अर्थव्यवस्था तरक्की नहीं कर रही थी। अर्थव्यवस्था के तेज विकास के लिए इन राहतों को खत्म करना जरूरी है। अभी भी लगातार गैस और पेट्रोलियम पर सब्सिडी खत्म करने की बात की जा रही है। पूंजीपति वर्ग ने इसी वजह से हाल में बेहद लचर खाद्य सुरक्षा विधेयक के पास होने का विरोध किया। इसी वजह से सारे बिजली बोर्डों का निजीकरण किया गया और बिजली की दरें बढ़ी। इसी वजह से पूरे देश में पानी के निजीकरण की योजना है।

लेकिन केजरीवाल एण्ड कम्पनी के मामले में पूंजीवादी प्रचार माध्यम फिलहाल इन बातों को बगल में रखकर उसकी जय-जयकार कर रहा है। यह इसलिए कि वे इसे स्थापित करना चाहते हैं। वे पहले मौजूद पूंजीवादी पार्टियों से क्षुब्ध-आक्रोशित जनता के सामने एक विकल्प प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे जनता वास्तविक विकल्प की ओर न जाय। और वे तत्कालिक तौर पर सफ़ल हो रहे हैं।

संस्कृति के द्वन्द में आधुनिक नारी

तरह-तरह की दैवीय शक्तियों के रूपों से नवाजी जाने वाली नारी की परिस्थिति में समय के साथ-साथ बदलाव दिखते नज़र आए, किसी युग में पुरुष के बराबर तो दूसरे युग में उसे पुरुष का गुलाम पाया गया। सामंती- धार्मिक पुरुषसत्तात्मक मानसिकता समाज के हर क्षेत्र में पाई जाती है। स्त्री को एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व मानने में समाज व परिवार दोनों की ही अस्मिता को ठेस पहुंचती है।

समाज के नियमों के मुताबिक स्त्री हमेशा किसी न किसी पुरुष की कस्टडी में रहती है। विवाह से पूर्व पिता और भाई, विवाह के बाद पति व पति की मौत के बाद बेटे की कस्टडी में और जैसे ही वह इस बेड़ी को चुनौती देने या तोड़ने की कोशिश करती है, समाज व परिवार की परम्परा की रक्षा के नाम पर पुरुष सदस्यों को गले की हड्डी बनती नज़र आयेगी। समय-समय पर जब भी उसने अपने आप को स्वतन्त्र करने की कोशिश की तो उसकी सामाजिक व आर्थिक स्थिति के चलते, पुरुष की मानसिक गुलामी से उसे निजात नहीं मिल सकी। हालांकि किसी भी पैमाने पर जारी हिंसा और धमकियां अब महिलाओं को घर की चारदिवारी में लौटने को विवश नहीं कर सकतीं। पर सच है कि मां के गर्भ में आने से लेकर बुढापे तक कई बार घर ही वैसी जगह में बदल जाता है, जहां महिलाओं को सबसे अधिक खतरा रहता है।

आज बेहतर शिक्षा से सुसज्जित महिलाएं पूरे साहस के साथ डॉक्टर, वकील, पत्रकार, बैंक कर्मचारी, राजनीतिज्ञ, शिक्षक आदि के रूप में सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कर रही हैं। समाज में बढ़ती हुई लैंगिक असमानता को खत्म करने के लिए सामाजिक न्याय के आंदोलनों में भी पूरी तरह से आवाज उठा रही हैं तो भी स्त्री सशक्तीकरण के इस युग में एक ओर स्त्रियां सशक्त हुई हैं तो दूसरी ओर कई मोर्चों पर विवश भी दिखाई देती है।

उन्हें विवश किया है इस उपभोक्तावादी संस्कृति ने, नए-नए लालच देकर। जिस व्यवस्था के विरोध में उसने अपने आप को खड़ा किया था, आज उसी व्यवस्था की पैरवी करने में लग गई। यानी जिस पितृसत्तात्मक सत्ता में उसने खुद को वस्तु व देह मानने से इनकार कर दिया, आज उपभोक्ता वादी संस्कृति फ़िर उसे वही देह और मात्र वस्तु होने के लिये बाध्य कर रही है।

बाजार के लिहाज से देखें तो ऐसा लगता है कि नारी की यौनिकता उसकी सबसे बड़ी ताकत है, खासतौर से पितृसत्तावादी समाज में। साइबर मीडिया आधुनिक नारी की एक नई तरह की छवि बनाने में सहायक रहा है। इसके चलते पुरानी रुढ़ियां मान्यताएं और नैतिकता नष्ट भी हुई हैं। इस माध्यम में भौतिकवादी संस्कृति का उभरता हुआ चेहरा पूरी तरह से दिखाई दे रहा है और इसके पीछे पितृसत्तात्मक मानसिकता और नजरिए का ग्राहक पुरुष समाज ही है।

आज की भोगवादी संस्कृति कामुकता का सहारा लेकर चलना चाहती है। ज़्यादातर फ़िल्में व विज्ञापन इसका प्रमाण हैं जिनका आज के युवा अनुसरण कर रहे हैं। आश्चर्य की बात यह है कि हर मामले में आधुनिक नज़र रखने वाला शिक्षित युवा पुरुष-समाज भी स्त्रियों के प्रति उन्हीं पुरानी रूढियों और मान्यताओं से ग्रस्त हैं। अपनी दबी हुई इच्छाओं व कुंठाओं की पूर्ति के लिए वह किसी भी तरह की हिंसा, सत्य, चोरी, बलात्कार कुछ भी करने को तैयार है। महिलाओं के प्रति ऐसी सोच विकसित करने में हमारा सामाजिक व सांस्कृतिक ताना-बाना भी समान रूप से दोषी है।

सूचना व मनोरंजन के माध्यमों द्वारा भी स्त्रियों को कमजोर व भोग्या रूप में प्रस्तुत किया जाता है। लैंगिक समानता की दिशा में एक बेहतर सांस्कृतिक माहौल बनाने के लिए इन संचार माध्यमों में भी भारी सुधार की जरूरत है। महिलाओं को समाज में बराबरी का दर्जा दिलाने के लिए, उन्हें शोषण और हिंसा से बचाने के लिए महिलाओं को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होना होगा और पुरुष समाज को भी इस मुहिम में शामिल होना पड़ेगा।

अपने रंग-रूप व बढती उम्र की फिक्र ने स्त्री-मुक्ति आंदोलन को दिशाहीन कर दिया है। आधुनिक स्त्री अपने आप को भोगवादी संस्कृति के जाल में उलझा कर रह गई है। आखिर स्त्री कैसा जीवन चाहती है? कहीं ऐसा तो नहीं कि मुक्ति की चाह लिए वह उस पूंजीवादी उपभोक्ता संस्कृति के जाल में फंसती चली जा रही है जिसकी उसे भनक तक नहीं? क्योंकि उसे इस व्यवस्था में भ्रमित किया जा रहा है कि उसकी सफलता अपनी इच्छाओं को किसी भी रास्ते की ऊंचाईयों को छू लेने में है भले उसके लिए उसे भारी कीमत चुकानी पड़े। ये जीवन केवल सत्ता पाने और भोग का नाम नहीं है। वह कुछ और भी है, जिसकी समझ हर स्त्री में होनी चाहिए।

– कृष्णा

आफस्पा के शिकार : नीडो तानिया और शर्मिला-इरोम चानू

नस्लवाद की भेंट चढ़ा नीडो तानिया

29 जनवरी को अरूणाचल प्रदेश के छात्र नीडो तानिया का लाजपत नगर के एक दुकानदार से झगड़ा हो गया क्योंकि उसने नीडो के बालों, रंग शक्ल सूरत आदि पर बेहूदा फब्तियां कसी और उसका मजाक उड़ाया। उसके विरोध करने पर उसे ना सिर्फ जाति और नस्ल संबंधी अपमानसूचक बातें कही गई बल्कि उसके साथ मारपीट भी की गई। इस मारपीट के फलस्वरूप अगले दिन अस्पताल में नीडो की मौत हो गई।

नीडो के पिता अरुणाचल प्रदेश में कांग्रेस पार्टी से विधायक हैं। शायद इस सत्ता के नशे के कारण से भी उसने दुकानदार की फ़ब्तियों से ज़्यादा आहत महसूस किया और उससे झगड़ा कर लिया। वर्ना उत्तर पूर्व के ज़्यादातर युवक युवतियों को चिंकी, चालू माल आदि कहकर रोज अपमानित किया जाता है और वे उसे चुपचाप सहने को मजबूर हैं।

पूरे मामले में दिल्ली पुलिस की भूमिका भी सवालों के घेरे में है। कहा जा रहा है कि पुलिस थाने ले जाकर पुछताछ करने और समझौता करवाने के बाद नीडो को वापिस वहीं झगड़ेवाली दुकान पर छोड़ गई। क्या ऐसा नीडो के खुद के कहने पर किया गया या पुलिस ने मामले की गंभीरता को नहीं समझा या फ़िर कहीं ऐसा तो नहीं कि नीडो ने अपने बाप के पद का हवाला दिया हो या अपने अधिकारों का दावा किया हो जो पुलिस को नागवार गुजरा हो और उसे सबक सिखाने की छुपी मंशा से पुलिस उसे वहीं बाजार में छोड़ आई हो।

दूसरी तरफ़ पुलिस ने नीडो की मौत होने और ज़्यादा हो हल्ला मचने पर उन लोगों को भी पकड़कर मुजरिम करार देकर जेल भेज दिया जिनको समझौते में गवाह बनाया गया था। इन सभी कारणों से मामले की पूरी जांच की जरूरत है। नीडो तानिया की मौत के बाद एक बार फ़िर से धरने प्रदर्शनों का दौर शुरू हो गया है। एक बार फ़िर से नस्ली और जातीय भेदभाव के ख़िलाफ़ नये और सख्त कानून बनाने की मांग हो रही है।

'नार्थ-ईस्ट' के लोगों के प्रति भेदभाव को दूर करने की बात हो रही है। कहा जा रहा है कि दिल्ली के लोग 'नार्थ-ईस्ट' के लोगों से दोयम दर्जे के नागरिकों जैसा व्यवहार करते हैं। आखिर उनका रवैया ऐसा क्यों है?

इसके लिये सीधे केन्द्र सरकार ही जिम्मेवार है जो 'नार्थ-ईस्ट' में फौज को डाले रखना चाहती है और फ़ौज के द्वारा ही सारे 'नार्थ-ईस्ट' पर राज करना चाहती है। इसके लिये वहां आर्मड फोर्सेज स्पेशल पावर 'एक्ट आफस्पा' लागू रखना चाहती है। और इसको उचित ठहराने के लिये वहां के लोगों को बागी, देशद्रोही और अलगाववादी ठहराने की कोशिश करती है। जिन लोगों के बारे में देश की केन्द्र सरकार, अपने क्षुद्र स्वार्थों के चलते, ऐसा प्रचार कर रही हो उनके प्रति आम आदमी का रवैया अपने सहोदर जैसा कैसे हो सकता है।

नीडो के पिता को चाहिए कि वह अपनी पार्टी से मांग करें कि वह नार्थ-ईस्ट से 'ऑफस्पा' तुरन्त हटाये। उन्हें मणिपुर की बहादुर महिला-शर्मिला इरोम, को नमन करना चाहिए जो दसियों साल से इस काले कानून के ख़िलाफ़ अनशन पर हैं। नीडो के पिता और पूरे पूर्वोत्तर के लोगों को 'आफस्पा' को हटाने की पुरजोर मांग करनी चाहिए। यही नीडो को सच्ची श्रद्धांजलि होगी और पूर्वोत्तर भारत के लोगों के लिये पूरे देश में सम्मानजनक जिन्दगी का द्वार खोलेगी।

-अजातशत्रु